“श्री कृष्णचैतन्य स-सनातनरूपक । गोपाल-रघुनाथाप्त-ब्रजबल्लभ पाहि माम ॥

श्री कृष्ण-भजन के परिपक्व भाव अथवा स्थायी भाव पाने के लिए साधन-क्रम

(श्रीमद भागवतम, भक्तिरसामृतसिंधु एवं माधुर्य कादंबिनी पर आधारित)

श्री राधाकुंडाश्रयी श्री श्रीमद कुंजबिहारी दास बाबाजी महाराज द्वारा संकलित

अनुवादक :
श्रीमती मधुमती अधिकारी

"सताम प्रसंगांमाम वीर्य संविदों भवन्ति हृतकर्णरसायना: कथा: ।
तज्जोषणादाश्वपवर्गवर्त्मानि श्रद्धारतिर्भक्तिरनुक्रमिष्यति ॥"

- (श्रीमद भागवातम, 3.25.25)

"भक्ति:परेशानुभावोविरक्तिरन्यत्रचैषत्रिक एककाल: ।
प्रपदया मानस्य यथा श्नत:स्यु:तुष्टि:पुष्टि:क्षुदपायो'नुयास: ॥

- (श्रीमद भागवतम, 11.2.42)

श्री हरिकथा में रुचि एवं प्रवृत्ति के स्तर	**साधना के स्तर**	**स्वरूप लक्षण (भक्तिदेवी कितना तुष्ट हो रही है)**	**तटस्थ लक्षण (भगवद-अनुभव कितना पुष्ट हो रहा है)**	**अनर्थ-निवृत्ति के स्तर (विषय-वैराग्य, अर्थात क्षुधा से निवृत्ति)**
श्रुति कहते हैं "रसो वै सः" - श्री भगवान रस स्वरूप हैं; उनके नाम गुण लीला मे उस रस की अभिव्यक्ति होती है । बहिर्मुख जीव साधूसंग मे सुनते हैं कि कैसे भगवान पतितों का उद्धार करते हैं, और वे कितने कृपालु हैं। ये बातें उसके कानों के द्वार से, उनके हृदय मे प्रवेश करते हैं । इस तरह उसके मन मे रुचि पैदा होती है और बार बार श्रवण की इच्छा होती है । श्रवण इच्छा भी बढ़ने लगती है। यूं ही किसी बात को सुन लेना श्रवण	सत्संग से उपजता है **श्रद्धा** महातकृपा-आश्रिता, भजन की आकांक्षा	साधू की संगत मे श्री हरिकथा सुनने से चित्त का संदेह रूपी मल दूर हो जाता है । जब भक्त का चित्त भगवद विषय के प्रति अनुकूल होता है, तब उस स्थिति को श्रद्धा कहते हैं। श्रद्धा भक्ति लता का बीज स्वरूप है। "श्रद्धा शब्दे बिशवास कहि सुदृढ़ निश्चय, कृष्णेभक्ति कोइले सर्वकृत होय ।" श्रद्धा के स्तर पर भक्त को लगता है कि, भक्ति शास्त्र यथार्थ है । शास्त्रार्थ मे निश्चित होना, जतन के साथ इनके अर्थ को अनुभव करना, समाधान करना, और षडविध शरणागति को अपनाना - ये श्रद्धा के लक्षण हैं ।	श्री भागवत कहते हैं "निर्मत्सराणाम सताम" , अर्थात एकमात्र निर्मत्सर साधूगण ही भागवत धर्म के अधिकारी हैं। हमारे चित्त पर क्रोध, काम, शोक, असूया, स्पर्धा, आदि का आक्रमण होता रहता है । ऐसे चित्त मे भगवान का स्फुरण नहीं हो सकता । (भागवतम 1.2.115) इन सभी दोषों को जल्दी से हटाने के लिए शास्त्र ने विधान दिया है कि सभी वस्तुओं मे भगवान का अधिष्ठान देखो और आदर प्रदान करो । (भागवतम 3.29.20, क्रम-संदर्भ) इसलिए, यदि हम भजन मे प्रवृत्त हुये हैं, तो सर्व प्रथम यह जान लें कि हमें किसी भी अन्य प्राणी को उद्वेग अथवा दुख नहीं देना चाहिये । (स्कन्द पुराण)	श्रीकृष्ण मे प्रीति : गंध मात्र देह मे प्रीति : बहुत गाढ़ा

श्री हरिकथा में रुचि एवं प्रवृत्ति के स्तर	साधना के स्तर	स्वरूप लक्षण (भक्तिदेवी कितना तुष्ट हो रही है)	तटस्थ लक्षण (भगवद-अनुभव कितना पुष्ट हो रहा है)	अनर्थ-निवृत्ति के स्तर (विषय-वैराग्य, अर्थात क्षुधा से निवृत्ति)
नहीं कहलाता । जब कोई बात चित्त मे जगह बना लेती है, तभी उसे हम श्रवण कह सकते हैं ।				
जब हम हरिकथा सुनने मे शिथिल होते हैं, तब उसे अप्रकृष्ट साधुसंग कहते हैं। और यदि हम जतन तथा आग्रह के साथ श्रवण करते हैं, तब उसे प्रकृष्ट साधुसंग कहते हैं । यदि हमारे दिल मे प्रतिष्ठा पाने की आशा हों, और हम इस वजह से श्रवण कर रहे हों, तो साधू का प्रेम हमारे मन को स्पर्श नहीं करेगा । क्यूंकि प्रतिष्ठा की आशा तो एक चण्डाल रमणी की तरह है, जो धृष्टता के साथ नृत्य करती रहती है । साधु का प्रेम निर्मल तन के समान है - वह भला ऐसी जगह पर क्यूँ जाए जहां पर ऐसा नृत्य होता हो ?	**साधुसंग** सत-महा पुरुष मे कायिक, वाचिक, मानसिक अभिनिवेश ।	"जगत व्यापक हरि, अज भव आज्ञाकारी, मधुर मूर्ति लीलाकथा, ए तत्व जाने जेइ, परम उत्तम सेई, तार संग कोरिहो सर्वथा ।" सजातीय, स्निग्ध स्वभाव वाले, भजन-विज्ञ, अनन्य भक्ति करनेवाले, दूसरों की निंदा-चर्चा तथा क्रोध, लोभ, दोष शून्य सदाचारी भक्त का संग करें । ऐसा भावपूर्ण संग कीजिए, ऐसा व्यवहार रखिए ताकि सत-महापुरुषों के सभी सद्गुण हृदय मे आ जाएँ । ऐसे सद-आचरणकारी भक्तों के संग के बिना हम भजन मे उन्मुख नहीं हो सकते ।	हम सत्संग करते हैं भजन की रीति सीखने के लिए। श्री दीक्षा-गुरु के चरण आश्रय के पहले हमे सत्संग का लाभ उठाकर सदाचार के बारे मे जिज्ञासा करनी चाहिए और शिक्षा लेनी चाहिए । सदाचार दो तरह के होते हैं - अंदर और बाहर । हमे कैसे पता चले कि हमने बाहरी सदाचार को अपनाया है ? यह तब सिद्ध सिद्ध होगा जब हमे अपने देह के प्रति वैराग्य होगा । अंदर से हम शुद्ध हुये हैं, यह पता चलेगा जब हम अहंकार, गर्व, द्वेष आदि से मुक्त होंगे ; हम सभी भूतों मे भगवान का वास देखेंगे, हमारे चित्त मे सौहार्द्य, क्षमा, दया, साम्य, और मैत्री के भाव होंगे । जब चित्त का मल पूरी तरह से दूर होगा, तभी भगवान का दर्शन लाभ होगा ।	श्रीकृष्ण मे प्रीति - गाढ़ा गंध देह मे प्रीति - अत्यंत
इस स्तर मे यह दोष रहता है की	**अनिष्ठिता**	साधुओं के प्रकृष्ट संग करने से भगवद कथा	हमारे अंदर श्रवण-कीर्तन मे शिथिल होने का दोष रहता	श्रीकृष्ण मे प्रीति - एकदेशव्यापिनी

श्री हरिकथा में रुचि एवं प्रवृत्ति के स्तर	साधना के स्तर	स्वरूप लक्षण (भक्तिदेवी कितना तुष्ट हो रही है)	तटस्थ लक्षण (भगवद-अनुभव कितना पुष्ट हो रहा है)	अनर्थ-निवृत्ति के स्तर (विषय-वैराग्य, अर्थात क्षुधा से निवृत्ति)
हम अप्रकृष्ट रूप से साधुसंग करते हैं, और श्री हरिकथा मे शिथिल होते हैं। इसलिए भक्ति देवी अपना विक्रम नहीं दिखाना चाहतीं । जतन और आग्रह के बिना भक्ति हमें प्रेम फल नहीं देतीं । भुक्ति, मुक्ति जैसी पिशाचियों की स्पृहा जब तक हमारे मन मे है, तब तक भक्ति देवी नहीं मिलतीं ।	**भजन क्रिया** भजन मे जतन और आग्रह की कमी ।	चित्त में प्रवेश करता है। अप्रकृष्ट संग करने से केवल यंत्रवत भजन-क्रिया होती है, न कि भगवद-कथा श्रवण । इसलिए अनर्थ निवृत्ति भी नहीं होती ; हम निष्ठिता स्तर पे नहीं जा पाते। प्रकृष्ट संग उसे कहते हैं, जब हम भक्ति मे श्रद्धावान ऐसे साधु के साथ प्रीतियुक्त संग करते हैं।	है। इसकी वजह से छः तरंगें और पाँच अंतराय प्रकट होते हैं। इनमे कुछ मुख्य अंतराय इस प्रकार हैं - जैसे, लय - अर्थात श्रवण, कीर्तन और स्मरण के दौरान नींद आना । विक्षेप - श्रवण-कीर्तन आदि के वक़्त, रजोगुण अधिक होने की वजाह से, लौकिक वार्ता का संसर्ग ।	देह मे प्रीति - पूर्णा
इस स्तर मे प्रकृष्ट साधूसंग होता है, और हम दृढ़ता के साथ श्री हरिकथा का श्रवण कीर्तन करते हैं । ऐसा करने से हमारा भजन 'निष्ठिता' कहलाता है । "नष्ट प्राएष्वभद्रेषू नित्यं भागवत सेवया, भगवत्युत्तम श्लोके भक्तिर्भवति नैष्ठिकी ।"	**निष्ठिता भजनक्रिया** भजन मे दृढ़ जतन और आग्रह	जब हम भजन मे ऐसे स्थिर हो जाते हैं कि कोई हमे भजन से हटा नहीं सकता, तब इस स्तर को निष्ठा कहते हैं। निष्ठा का चिन्ह हैं लय और विक्षेप न होना। इस स्तर पे जाने के लिए हमें भक्ति मे श्रद्धावान, ऐसे साधू का प्रीतीयुक्त संग करना है। उनके संग मे रोज़ भगवद श्रवण करना है, और भगवद-भक्त की सेवा करनी है, तब हमारे सारे अनर्थ नष्ट-प्राय होंगे, और हम इस स्तर पर जाएंगे । सांसारिक लाभ-हानि, मान-अपमान, राग द्वेष के घात-प्रतिघात सहकर भी भजन मे स्थिर रहने को निष्ठा कहते हैं।	इस स्तर मे यदि हम जतन और आग्रह के साथ भजन करेंगे तो हमारा प्रारब्ध और अप्रारब्ध पाप नाश अवश्य होगा । चित्त मे अविद्या-जनित जो रजो-तमो गुण हैं, उनका नाश होता है, और चित्त विद्या-जनित सत्वगुण मे अवस्थान करने लगता है । (भागवतम 1.2.15-17) सुकृति से, दुष्कृति से, अपराध से, और भक्ति से उठे हुये अनर्थों से हम मुक्त होते हैं । जब प्यार से हम श्री हरिकथा श्रवण करते हैं, तब भगवान कान के द्वारा हमारे हृदय मे प्रवेश करके सब अमंगल दूर करते हैं । (भागवतम 1.2.17-18) निष्ठा दो तरह की होती हैं - 1) साक्षात भक्ति के विषय मे 2)	श्रीकृष्ण मे प्रीति-बहुदेशव्यापिनी देह मे प्रीति - प्रायिकी

श्री हरिकथा में रुचि एवं प्रवृत्ति के स्तर	साधना के स्तर	स्वरूप लक्षण (भक्तिदेवी कितना तुष्ट हो रही है)	तटस्थ लक्षण (भगवद-अनुभव कितना पुष्ट हो रहा है)	अनर्थ-निवृत्ति के स्तर (विषय-वैराग्य, अर्थात क्षुधा से निवृत्ति)
			भक्ति के अनुकूल जो वस्तुएँ हैं, उनके विषय मे । (माधुर्य-कादंबिनी)	
इस स्तर मे श्री हरिकथा रोचक और स्वादिष्ट लगता है ।	**रुचि** भजन विषय मे रुचि	सांसारिक विषयों से हटकर, जब विलक्षण रूप से श्रवण-कीर्तनादि रोचक लगने लगे, तब हम रुचि के स्तर पर पहुंचे हैं । इस स्तर पर भगवत-प्राप्ति, आनुकूल्य और सौहार्द्य - इन तीनों की बुद्धिपूर्वक अभिलाषा करनी पड़ती है। आसक्ति स्तर मे ये स्वाभाविक हो जाते हैं । रुचिवान जन को बारबार श्रवण कीर्तन करने पर भी श्रममात्र का आभास नहीं होता । जल्दी ही हमे श्रवण-कीर्तन का व्यसन लग जाता है ।	रुचि स्तर मे पाप के बीज का भी नाश हो जाता है और भगवान के माधुर्य का अनुभव होता है । श्री भगवान के रूप, गुण , लीला, नाम जब हमे सुस्वादु लगने लगता है, तब हम उसे 'भगवान के माधुर्य का अनुभव' होना कहते हैं । जब भगवान के नाम, रूप, गुण, लीला मे रुचि बढ़ती जाती है, तब एक समय ऐसा आता है जब वह आसक्ति मे परिणत हो जाता है । फिर रति और प्रेम का भी उदय होता है । रुचि दो तरह की होती है - 1) वस्तु की विशेषता पर निर्भर करने वाली[1] 2) वस्तु की विशेषता की अपेक्षा नहीं रखनेवाली ।	श्रीकृष्ण मे प्रीति - प्रायिकी देह मे प्रीति - बहुदेशव्यापिनी
इस स्तर मे श्री हरिकथा इतना रोचक लगता है कि हम उसे त्याग ही नहीं सकते ।	**आसक्ति** भजन विषय मे आसक्ति, शुभदा, क्लेश दूर करे ।	इस स्तर मे भगवत-प्राप्ति, भक्ति की अनुकूल बातें, भगवान से सौहार्द्य - इन सब की अभिलाषा स्वाभाविक हो जाती है । भजन की रुचि जब अपने चरम शिखर पर पहुँचती है , और भक्त सिर्फ भगवान को ही विषय मानते हैं, ऐसे स्तर को	इस स्तर मे भक्ति देवी के अनुगमन करने की वजह से ऐसी विद्या प्राप्त होती है जिससे पाप-वासना का मूल, जो अविद्या है, वह भी नष्ट हो जाता है । श्री हरि के नाम , रूप, गुण, लीला मे मन का अभिनिवेश हो जाता है । चित्त कब भगवान के नाम, रूप, गुण,	श्रीकृष्ण मे प्रीति - पूर्णा देह मे प्रीति - एकदेशव्यापिनी

[1] उदाहरण स्वरूप - कीर्तन मे हमारी रुचि इस पर निर्भर करती है कि गायक ठीक सुर तथा लय मे गा रहा है या नहीं । यह निम्न स्तरीय रुचि है । जब उच्च स्तरीय भगवद-रुचि होती है, तब हम इसकी परवाह नहीं करते कि गायक की गायकी कैसी है । हमे हर हाल मे महामंत्र रोचक लगता है ।

श्री हरिकथा में रुचि एवं प्रवृत्ति के स्तर	साधना के स्तर	स्वरूप लक्षण (भक्तिदेवी कितना तुष्ट हो रही है)	तटस्थ लक्षण (भगवद-अनुभव कितना पुष्ट हो रहा है)	अनर्थ-निवृत्ति के स्तर (विषय-वैराग्य, अर्थात क्षुधा से निवृत्ति)
		आसक्ति कहते हैं । रुचि के स्तर मे समय समय पर मन दूसरे वार्ता मे प्रवेश कर जाता है, और उसे बुद्धिपूर्वक खींचकर भगवान के नाम गुण लीला मे लाना पड़ता है। आसक्ति के स्तर पर यह स्वभावतः होता है। अर्थात, मन अपने आप ही विषय मे रह नहीं पाता, और भगवान मे निविष्ट हो जाता है । ठीक से भजन करने पर भगवान मे आसक्ति होती है ।	लीला से निष्क्रांत होकर दूसरी वार्ता मे लिप्त हो जाती है, और कब उस वार्ता से भगवद गुणों मे प्रवेश कर जाता है , यह आसक्तिवान साधक को समझ मे नहीं आता।	
भाव के स्तर मे श्री हरिकथा महा अमृत जैसा लगता है ।	**भाव** सुदुर्लभा, मोक्ष को लघु बना दे ।	जब भगवान को पाने की अभिलाषा, उनको पाने के लिए जो भी अनुकूल हो, उन चीजों की अभिलाषा, और भगवान से सौहार्द्य की अभिलाषा - ये तीनों मिलकर चित्त को इतना स्निग्ध बना दें, कि चित्त मसृण हो जाए - ऐसी मनोवृत्ति को भावभक्ति कहते हैं। हमारा चित्त स्निग्ध है अथवा इसमे भाव अंकुरित हुआ है, कैसे पता चलेगा ? इसके 9 लक्षण हैं - क्षांति, एक पल भी बिना भजन के हम बीता ही नहीं सकते, वैराग्य, मान शून्य, आशाबन्ध, बहुत ज़्यादा उत्कंठा, नाम गान मे सदा रुचि, उनके गुण बखान मे	'विशुद्ध सत्त्व' श्री भगवान की अंतरंगा स्वरूप शक्ति की वृत्ति है। भाव के स्तर मे साधक के चित्त मे विशुद्ध सत्त्व का आविर्भाव होता है। अब मोक्ष का सुख भी तुच्छ लगने लगता है । अन्तःकरण चिन्मय हो जाता है । सत्त्व गुण भी प्राकृत होता है । इस स्तर पर, चित्त मे सत्त्व गुण का भी नाश हो जाता है, और केवल विशुद्ध सत्त्व स्थायी रूप मे बस जाता है । अब यह स्थायी भाव - विभाव, अनुभाव, सात्विक, और संचारी भाव से युक्त होकर 'भक्ति रस' मे परिणत हो जाता है ।	श्रीकृष्ण मे प्रीति - आत्यंतिकी देह मे प्रीति - गंधमात्र

श्री हरिकथा में रुचि एवं प्रवृत्ति के स्तर	साधना के स्तर	स्वरूप लक्षण (भक्तिदेवी कितना तुष्ट हो रही है)	तटस्थ लक्षण (भगवद-अनुभव कितना पुष्ट हो रहा है)	अनर्थ-निवृत्ति के स्तर (विषय-वैराग्य, अर्थात क्षुधा से निवृत्ति)
		रुचि, और उनके वासस्थान के लिए प्रीति।		
प्रेम के स्तर पर श्री हरिकथा मे विशेष घन आनंद मिलता है और नित्य नव-नवायमान लगता है, जैसे कोई कामुक व्यक्ति के लिए काम-वार्ता हो।	**प्रेम** इसकी आत्मा है विशेष घन आनंद, श्री कृष्ण को आकर्षण करे ।	भगवान को पाने की अभिलाषा, इसके लिए जो जो भी अनुकूल हों - उनकी अभिलाषा, उनसे सौहार्द्य की अभिलाषा - ये अधिक से अधिक होकर आपके चित्त को इतना स्निग्ध बना दें, ऐसा स्नान करा दें, कि आप परम आनंद की चरम स्थिति को प्राप्त कर लें। श्री कृष्ण के लिए आपको अतिशय प्रगाढ़ अपनापन महसूस होने लगे - तब पंडितगण इस स्थिति को प्रेम कहकर इसका यशोगान करते हैं। श्री कृष्ण के अलावा और कुछ भी, जैसे, देह-गेह आदि विषय अब 'अपना' नहीं लगता ।	"कृष्ण नाम कृष्ण गुण कृष्ण लीला वृंद, कृष्णेर स्वरूप सम सब चिदानंद " - (चैतन्य चरितामृत) जैसे पारद और गंधक के प्रतिकृया से कज्जवल बनता है, उसी तरह जब भगवद रूप गुण लीला के साथ हमारा अन्तःकरण एक हो जाता है, उस स्थिति को प्रेम कहते हैं। जिस तरह चुंबक लोहे को आकर्षण करता है, उसी तरह प्रेम भी श्री कृष्ण को आकर्षण करता है । तब श्री भगवान भक्त के नयन गोचर हो जाते हैं। वे भक्त के इंद्रियों को खुद के सौन्दर्य, सौस्वर्य (सुमधुर स्वर), सौकुमार्य, सौरस्य, औदार्य, कारुण्य आदि गुणों का अनुभव कराते हैं । (माधुर्य कादंबिनी 8) जब प्रेम के साथ उत्कंठा का संयोग होता है, तब भगवान का दर्शन मिलता है । (श्री गोपालचंपू उ: 29.58)	श्रीकृष्ण मे प्रीति - परमात्यंतिकी देह मे प्रीति - नैकापि (शून्य)